खाद्य मुद्रास्फीतिः इस बार यह भिन्न है*

सुबीर गोकर्ण

मैं प्रो. परचुरे को मुझे इस वर्ष का काले स्मारक व्याख्यान देने हेतु आमंत्रित करने के लिए धन्यवाद देता हूँ। यह व्याख्यान राव साहब आर.आर. काले के सम्मान में आरंभ किया गया था जिनकी वजह से गोखले इंस्टीट्यूट ऑफ इकॉनॉमिक्स एंड पालिटिक्स नामक यह महान संस्था स्थापित हुई। एक वकील के रूप में अपनी व्यावसायिक उपलब्धियों के बावजूद वे एक विनम्र और सादगी से भरे व्यक्तित्व थे। इस संस्था की स्थापना में उनके वित्तीय योगदान को देखते हुए यह पूर्णतया उचित ही था कि इस संस्था का नाम उनके नाम पर रखा जाता लेकिन उन्हें संकोच था और इस संस्था का नाम गोपालकृष्ण गोखले के नाम पर रखा गया जो कि भारतीय इतिहास के पाठकों के लिए परिचित नाम है। हालांकि राव साहब काले के नाम से यह संस्था सुशोभित नहीं है पर उनके जिन गुणों को मान्यता मिली है वे किसी भी गतिविधि को चलाये रखने और उसे प्रभावशाली बनाये रखने के लिए बुनियादी आधार हैं। उनकी स्मृति में इस व्याख्यान को देते हुए मैं स्वयं को बहुत सम्मानित और भाग्यशाली अनुभव कर रहा हूँ।

2. गोखले इंस्टीट्यूट में बोलते हुए मैं बहुत प्रसन्नता अनुभव कर रहा हूँ। मेरे बहुत सारे साथी वर्षों तक इस संस्था में पढ़ते रहे और उनके साथ अपने विचार विनिमय और सहभागिता का हमेशा मैंने आनंद उठाया है और उनकी समझ और अन्तर्दृष्टि को बहुत महत्त्वपूर्ण माना है। इसके अलावा इंस्टीट्यूट में एक भारतीय रिज़र्व बैंक पीठ भी है और हमें बड़ी प्रसन्नता है कि प्रो. परचुरे एक ऐसे समय में इस पीठ पर आसीन हैं जब हम एक रणनीति के तहत देश भर में पीठ पर भारतीय प्रोफेसरों से अपना संवाद बढ़ा रहे हैं और ज्ञान के दो-तरफा विनिमय में लगे हुए हैं।

3. आज के व्याख्यान के विषय की ओर आते हुए मैं यह कहूंगा कि इसका शीर्षक हाल की एक पुस्तक से लिया गया है। वित्तीय संकट पर कारमेन रेनहार्ट और केनेथ रोगोफ[1] द्वारा लिखी गयी यह पुस्तक एक ऐतिहासिक महत्त्व का बहुत प्रभावशाली कार्य है। एक अत्यंत आकर्षक शीर्षक के अलावा, जिसे लेना हमेशा ही बड़ा लुभावना होता है, मैं अनुभव करता हूँ कि पुस्तक में वर्णित ऐतिहासिक गतिशीलता और आज भारत में खाद्यान्न मुद्रास्फीति को लेकर हम जैसी स्थिति का सामना रहे हैं - उन दोनों के बीच कुछ समानताएं हैं। संकट इसलिए बार-बार आते हैं कि क्योंकि उन्हें जन्म देने वाली परिस्थितियों के बीच इतना फर्क होता है कि लोगों के लिए उनकी अपरिहार्यता से इन्कार करना कठिन हो जाता है। तथापि, प्रायः हर संकट में निहित वाहक तत्व अनिवार्यतः समान होते हैं। पुस्तक में जिन आर्थिक संकटों की कथा है उन सभी संकटों में जोखिमों की असहनीय मात्रा ऋण-जोखिमों को कम आंकना तथा विनियामक क्षमता में क्षरण या उसकी अपर्याप्तता सामान्य तत्व हैं।

4. मैं जब रिज़र्व बैंक की सेवा में आया तब लगभग दो वर्षों तक खाद्यान्न मुद्रास्फीति सबसे प्रमुख मुद्दा था जो 2007 के अंत में आरंभ हुआ था और 2008 की पहली छमाही में इसमें बहुत अधिक तेजी आयी। उस अवधि में निश्चय ही इसका वैश्विक आयाम था पर जो बात चौंकाने वाली है, वह यह कि वैश्विक खाद्य मुद्रास्फीति के कम हो जाने के बाद भी भारत में खाद्यान्न मुद्रास्फीति की स्थिति जारी रही। 2009 में वर्षा की कमी को इसका कारण माना गया और हम सबको लगा कि एक बार अच्छा मानसून आने से स्थिति सुधर जायेगी पर फिर भी खाद्यान्न मुद्रास्फीति की स्थिति में कोई राहत नहीं मिली। हमने सोचा कि वर्ष 2011 की प्रतीक्षा की जाये। 2011 भी अपेक्षाकृत अच्छा मानसून वर्ष था परन्तु मानसून के तुरन्त बाद भी स्थिति में बहुत राहत नहीं थी। हाल के सप्ताहों से मिले आंकड़े नीति निर्माताओं के लिए अच्छे हैं क्योंकि ये दर्शाते हैं कि खाद्यान्न मुद्रास्फीति में सुधार हुआ है पर फिर भी इसका स्तर अभी भी काफी अधिक है।

5. इन दो वर्षों की अवधि में मैं रिज़र्व बैंक की सेवा में हूँ और खाद्यान्न मुद्रास्फीति की लगातार बनी हुई स्थिति मौद्रिक नीति के निर्माण में एक बहुत बड़ी चुनौती रही है। एक ऐसा दृष्टिकोण भी है जो कि पूरी तरह तर्कसंगत है कि खाद्यान्न मुद्रास्फीति से निपटने में मौद्रिक नीति की कोई भूमिका नहीं है और इसके स्थान पर नीतिगत कार्रवाई मूलभूत मुद्रास्फीति के लिए किये गये उपायों से जुड़ी होनी चाहिए। तथापि, यह तर्क तब कमजोर पड़ जाता है जब एक जगह देखते हैं कि खाद्यान्न मुद्रास्फीति की घटनाएं अस्थायी हैं या अल्पकालिक हैं

---

* भारतीय रिज़र्व बैंक के उप गवर्नर डॉ. सुबीर गोकर्ण द्वारा गोखले इंस्टीट्यूट ऑफ पॉलिटिक्स एंड इकॉनॉमिक्स, पुणे में 9 दिसम्बर 2011 को व्याख्यान दिया गया। इसमें श्री भूपाल सिंह और श्री जी.वी. नधानियल के योगदान को स्वीकार किया जाता है। साथ ही जलवायु परिवर्तन पर इन्द्रजीत राय के योगदान को भी स्वीकार किया जाता है।

[1] कारमेन एम. रेनहार्ट और केनेथ एस. रोगोफ (2008) 'दिस टाइम इज़ डिफरेंट' : ए पेनोरमिक व्यू ऑफ एट सेंचुरीज़ ऑफ फाइनेंशियल क्राइसेसेड. एन.बी.ई. आर. वर्किंग पेपर 13882. नेशनल ब्यूरो ऑफ ईकॉनॉमिक रिसर्च

चार्ट 1: भारत में खाद्य मुद्रास्फीति: व्यापक परिदृश्य

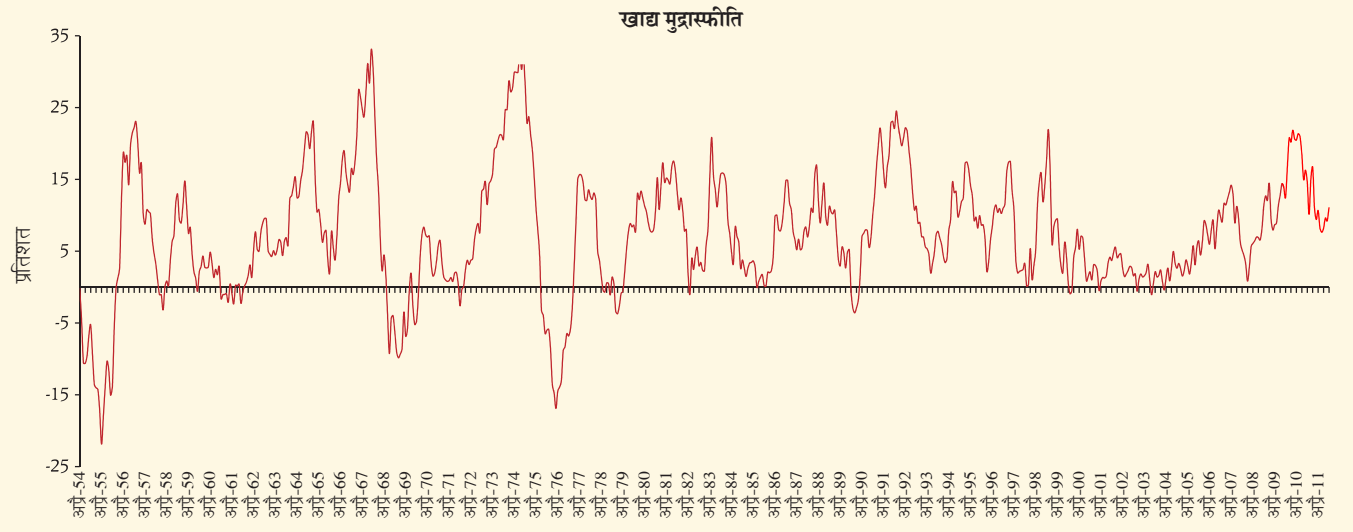

और दूसरी जगह पाते हैं कि वे लगातार बनी हुई हैं और ऐसा हाल के वर्षों में होता रहा है। खाद्यान्न मुद्रास्फीति के लगातार बने रहने को ध्यान में रखकर या जैसा कि किसी भी निरन्तर बने रहने वाले आपूर्ति आघात के मामले में होता है, उचित प्रत्युत्तर यही रहा है कि इस आघात को अधिक व्यापक या सामान्यीकृत मुद्रास्फीतिगत दबावों के रूप में फैलने से रोकने के लिए मौद्रिक नीति को उपयोग में लाया जाये। दूसरे शब्दों में मुद्रास्फीति को नियंत्रण में रखने के लिए पण्य वस्तुओं की सभी श्रेणियों में सापेक्ष कीमतों को उन वस्तुओं के पक्ष में परिवर्तित किया जाये जो आपूर्ति आघात को झेल रही है।

6. फिलहाल मैं मौद्रिक नीति परिदृश्य से कुछ देर के लिए हटकर सापेक्ष कीमतों के मुद्दे की ओर आना चाहता हूँ। जब हम इस पर चर्चा करते हैं तो हम तुरन्त व्यष्टि अर्थशास्त्र के क्षेत्र में, अर्थात मांग और आपूर्ति की मूलभूत शक्तियों के क्षेत्र में प्रवेश कर जाते हैं। इस परिदृश्य में एक सरल प्रश्न कि "खाद्यान्न कीमतें लगातार क्यों बढ़ रही हैं" का सरल उत्तर है "क्योंकि मांग लगातार आपूर्ति से अधिक है।" अगला सरल प्रश्न है कि "हम खाद्यान्न मुद्रास्फीति को कम कैसे कर सकते हैं" का सरल उत्तर है कि "आपूर्ति को जितना जल्दी हो सके, बढ़ाया जाये।"

7. मेरे इस व्याख्यान के शीर्षक के संदर्भ में मैं इस बिन्दु पर जोर देना चाहता हूँ कि खाद्यान्न मुद्रास्फीति भारत के लिए कोई नयी समस्या नहीं है। चार्ट 1 में 1950 के दशक से आरंभ करते हुए हम अपेक्षाकृत बहुत सारी ऐसी घटनाएं देख सकते हैं जब खाद्यान्न कीमतों में तीव्र बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसी कुछ घटनाओं में कुछ कीमतें दूसरी घटनाओं की तुलना में बहुत अधिक तीव्रता से बढ़ीं और ऐसी अनेक घटनाएं विशेषकर हाल के दशकों में अपेक्षाकृत अल्पजीवी रही हैं। हाँ, सर्वाधिक तीव्र वृद्धि के वे दो उदाहरण हैं जो 1960 के दशक के अंतिम वर्षों में और 1970 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में देखने मिलते हैं। उसके बाद से प्रकट रूप से हमें ऐसा कुछ भी देखने को नहीं मिला है जिसकी मुद्रास्फीति के उच्च दरों के रूप में उनसे तुलना की जा सके। तथापि, उसका ढाँचा कुछ भिन्न है: एक दीर्घसूत्री लगातार बढ़ती हुई प्रवृत्ति का स्पष्ट संकेत है जिसकी शुरूआत 2003 में किसी समय हुई थी और यह प्रवृत्ति छोटी-छोटी क्रमभंगताओं के बावजूद लगातार बनी हुई हैं।

8. निःसंदेह ये बहुत कोलाहलपूर्ण आंकड़े हैं। हमने उन्हें व्यवस्थित रूप से रखने का प्रयास किया है ताकि कुछ अधिक सारगर्भित निष्कर्षों तक पहुँचा जा सके। सारणी-2 में छह दशकों के विशिष्ट प्रकरणों को

चार्ट 2: खाद्य मुद्रास्फीति की निरंतरता

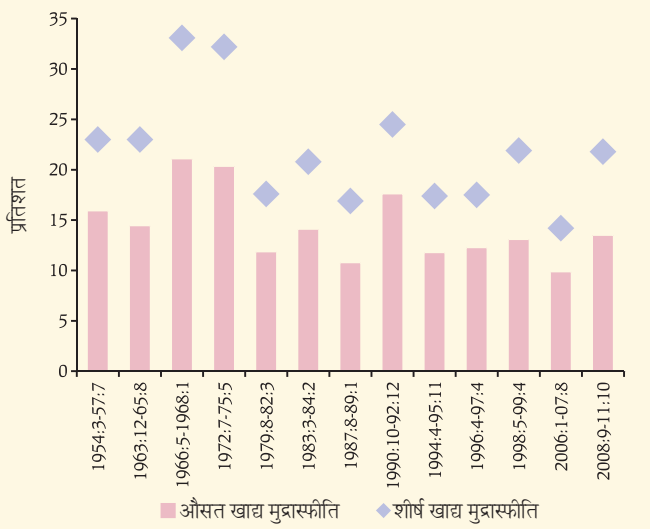

चार्ट 3: खाद्य मुद्रास्फीति की निरंतरता

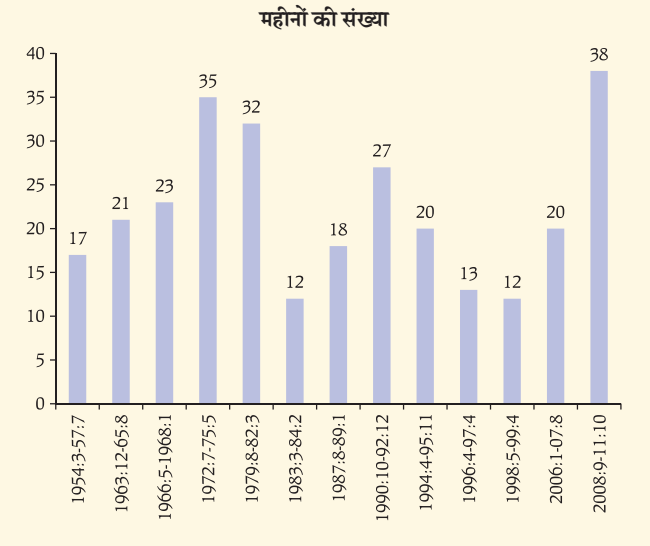

इस आधार पर दर्शाया गया है कि प्रत्येक प्रसंग में औसत खाद्यान मुद्रास्फीति दर 10 प्रतिशत या उससे अधिक थी। इन प्रसंगों के दौरान सारणी औसत और चरम दरों को दर्शाती है। 1960 के दशक के अंतिम वर्षों में और 1970 के प्रारंभिक वर्षों के प्रसंग अलग से दिखाई पड़ते हैं, जबकि हाल के प्रसंग औसत और चरम दोनों दरों के हिसाब से अपेक्षाकृत अधिक सामान्य हैं। तथापि, एकदम हाल के प्रसंगों में पुनः कुछ तेजी के संकेत हैं।

9. लेकिन जहाँ तक मात्रा का प्रश्न है, खाद्यान्न मुद्रास्फीति का एक अधिक चिंताजनक लक्षण उसका बने रहना है। सारणी-3 एक अत्याधिक महत्वपूर्ण ढाँचे को दर्शाती है जो कि इस व्याख्यान के शीर्षक का आधार है। हमारे सामने 70 के दशक के प्रारंभिक वर्षों और 70 के दशक के अंतिम और 80 के दशक के प्रारंभिक वर्षों के दो लगातार बने रहने वाले प्रसंग हैं। जिनके दौरान खाद्यान्न मुद्रास्फीति क्रमशः 35 महीनों तक और 32 महीनों तक औसतन 10 प्रतिशत के चिह्न से अधिक रही। उसके बाद जैसा कि ग्राफ स्पष्ट रूप से दर्शाता है, ये प्रसंग अपेक्षाकृत रूप से अल्पजीवी रहे हैं जिनमें सबसे लंबा प्रसंग 90 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में 27 महीनों तक बना रहा। 1987 के भीषण सूखे की स्थितियों में भी उच्च खाद्यान्न मुद्रास्फीति का प्रसंग केवल 18 महीनों तक बना रहा। परन्तु हाल का एक का प्रसंग सितम्बर 2008 से अक्तूबर 2011 तक 38 महीनों तक बना रहा और देखा जाये तो एक प्रकार से अभी भी बना हुआ है। इसके अलावा हम उन थोड़े थोड़े अन्तरालों को छोड़ दें जो कि चार्ट-1 में दिखाई पड़ते हैं तो अंतिम दो प्रसंगों को और भी अधिक लंबे समय तक चलने वाले प्रसंग कहा जा सकता है।

10. इस प्रकार से स्थिति का लगातार जारी रहना क्या उन स्थितियों का दोबारा लौटाना है जो 1980 के पहले विद्यमान थीं? क्या हम अपने आर्थिक विकास के एक ऐसे दौर में प्रवेश कर रहे हैं जिसमें खाद्यान्न आपूर्ति के दबाव पुनः एक बार वृद्धि और समष्टि आर्थिक स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर देंगे? इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिए हमें यह देखना होगा कि अतीत में खाद्यान्न मुद्रास्फीति किन वजहों से हुई थी और क्या वे ही कारक तत्व अब पुनः सक्रिय हैं?

11. हम इसे अगली तीन सारणियों में देखने का प्रयास करेंगे। ये तीनों ग्राफ अलग-अलग अवधियों के लिए समग्र खाद्यान्न मुद्रास्फीति में अलग-अलग श्रेणियों के खाद्यान्न के योगदान को दर्शाते हैं। चार्ट-4, 1960 और 1970 के दशक की तस्वीर को दर्शाता है।

चार्ट 4: 1960 और 1970 के दशक की खाद्य मुद्रास्फीति के कारक

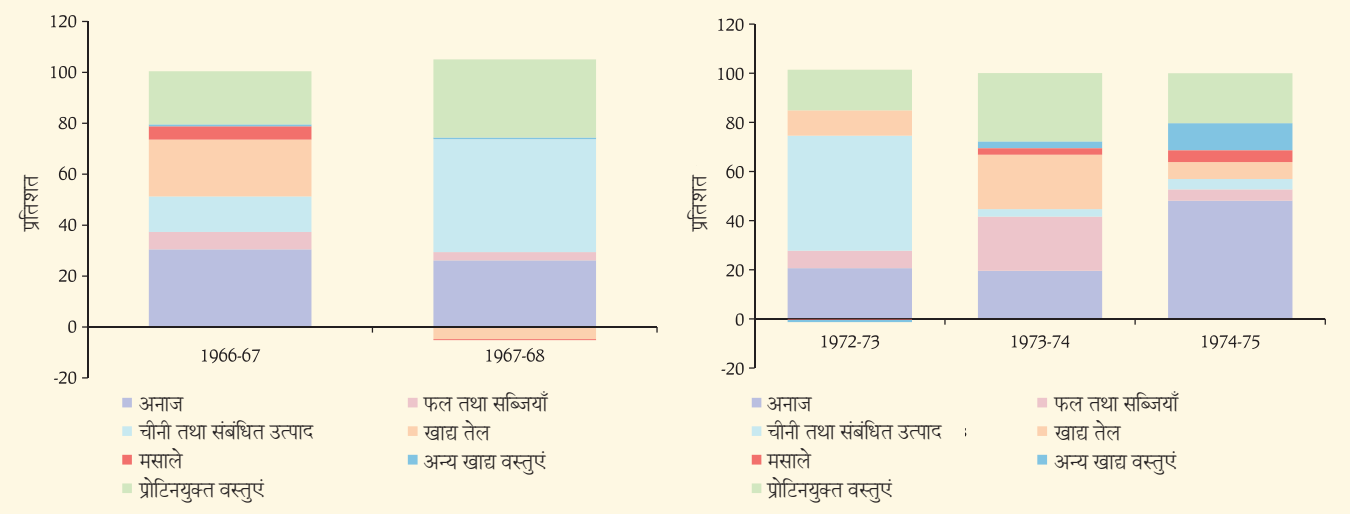

चार्ट 5: 1980 और 1990 के दशक की खाद्य मुद्रास्फीति के कारक

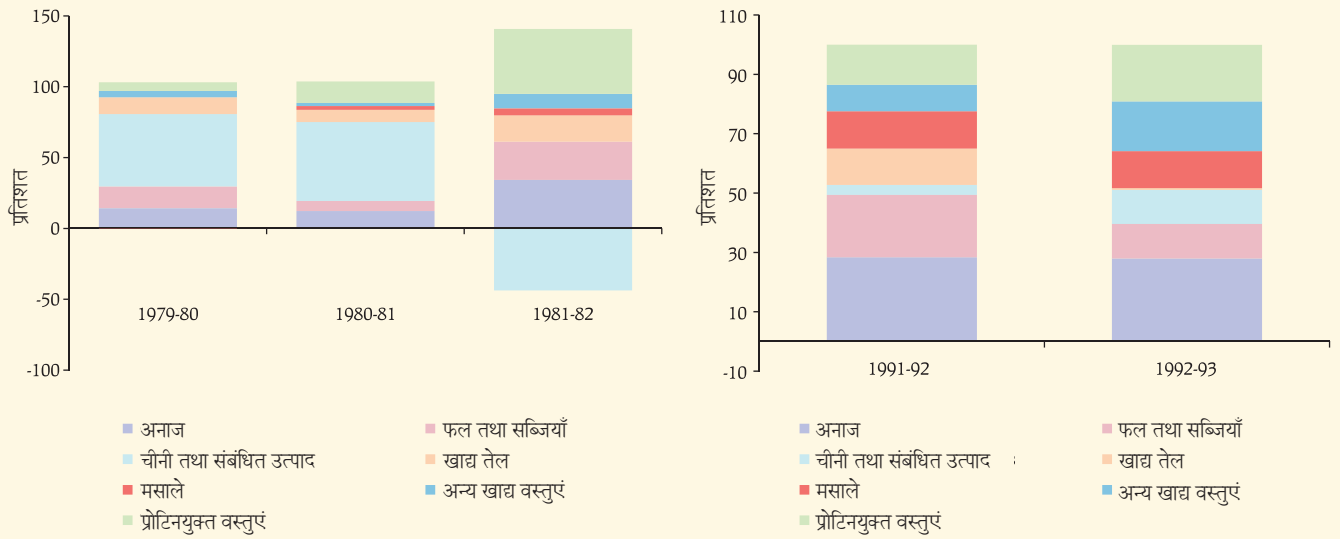

चार्ट 5, 1980 और 1990 के दशकों की तथा चार्ट 6, 2000 के पहले दशक की स्थिति को दर्शाता है। इन ऐतिहासिक तुलनात्मक स्थितियों से अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। जैसा कि चार्ट 4 में देखा जा सकता है 1960 और 1970 के दशकों में जिन वर्षों को चुना गया है उनमें खाद्यान्न मुद्रास्फीति के लिए मुख्यतया अनाज और चीनी जिम्मेदार रही हैं। 1972 से 1975 तक की तीन वर्षों तक की अवधि में, जो पहले हुए विमर्श में एक सर्वाधिक लंबा प्रसंग पाया गया है, इससे संबंधित चार्ट में जो बात सबसे अधिक ध्यान खींचती है कि ये दो श्रेणियाँ खाद्यान्न मुद्रास्फीति को पैदा करने में एक दूसरे से स्पर्धा करती नजर आ रही है। पहले वर्ष में जबकि चीनी का योगदान अधिक है, जबकि बाद के दो वर्षों में अनाज की भूमिका अधिक है। समग्र खाद्यान्न मुद्रास्फीति को पैदा करने में दोनों का हिस्सा सबसे अधिक है।

12. अगले दो दशकों तक तस्वीर में कोई नाटकीय बदलाव नहीं आता हालांकि खाद्यान्न की अन्य श्रेणियाँ भी स्पष्टतया अधिक महत्वपूर्ण ढंग से अपनी भूमिका अदा करना आरंभ कर देती हैं। 1980 के दशक में चार्ट के लिए चुने गये वर्षों में चीनी का योगदान प्रमुख था और अनाज की भूमिका अपेक्षाकृत सामान्य रही। 1981-82 में प्रोटीन (जिनमें दाल, दूध, अंडे, मांस और मछली शामिल है) दिखाई पड़ने लगते हैं और इसी प्रकार फल और सब्जियाँ भी उभरती हैं। 1990

चार्ट 6: 2000 के दशक की खाद्य मुद्रास्फीति के कारक

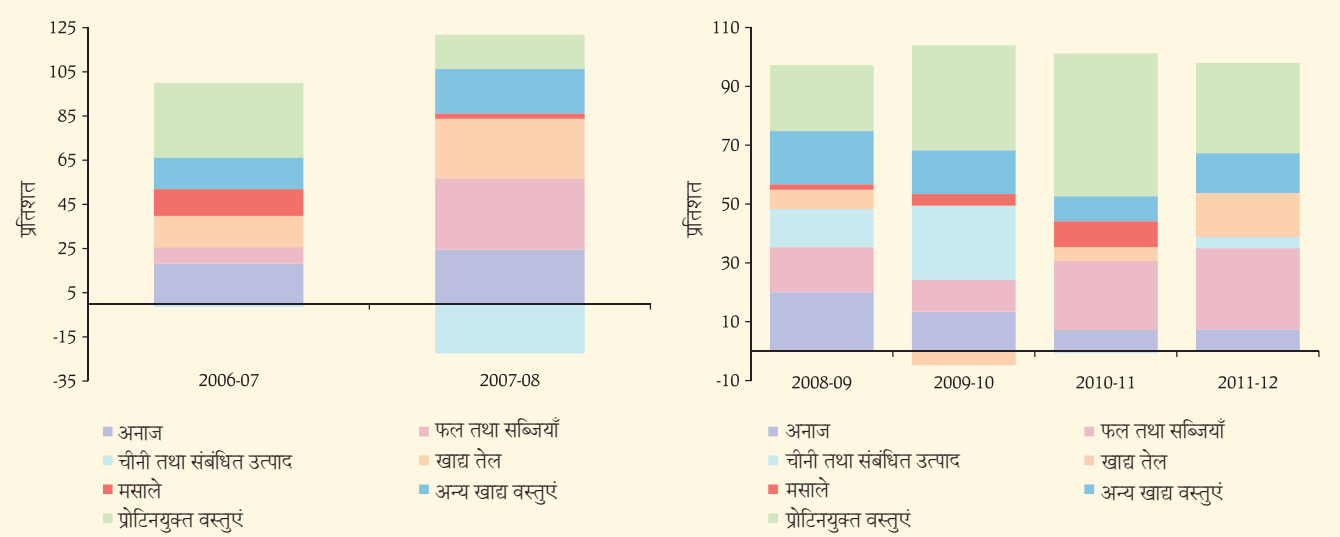

के दशक में चीनी की भूमिका घट जाती है, जबकि अनाज की भूमिका पुनः प्रकट होती है, जिसके साथ फल, वनस्पतियाँ और प्रोटीन भी प्रकट होते हैं। समग्र रूप से यदि हम खाद्यान्न मुद्रास्फीति को पैदा करने वाली मदों के अनुसार इन चार दशकों की विशेषता देखें तो यह तर्क देना उचित होगा कि इनमें अनाज और चीनी की भूमिका सर्वाधिक रही और अवधि के उत्तरार्द्ध में प्रोटीन, फलों और वनस्पति ने सहायक भूमिका निभायी है।

13. पिछले दशक के दौरान खाद्यान्न मुद्रास्फीति में विभिन्न घटकों के योगदान को देखा जाना चाहिए। प्रदर्शन के लिए चुने गये वर्षों में अनाज और चीनी स्पष्टतया पृष्ठभूमि में चले गये हैं, जबकि प्रोटीन, फल और वनस्पतियों ने अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी आरंभ कर दी है। दशक के प्रारंभिक हिस्से में प्रोटीन और वनस्पतियों ने अपनी-अपनी भूमिकाओं को बदल लिया, जैसे कि पहले के दशकों में अनाज और चीनी ने अपनी भूमिकाएं अदा की थीं। तथापि, पिछले चार वर्षों में जो कि उच्च मुद्रास्फीति के लगातार बने रहने के हाल के प्रसंग को दर्शाते हैं, निरपेक्ष और सापेक्ष दोनों रूपों में प्रोटीन, फल और वनस्पतियों का योगदान खाद्यान्न मुद्रास्फीति को पैदा करने में स्पष्ट रूप से सर्वाधिक रहा है। अनाज और चीनी का कुछ योगदान रहा है लेकिन इस पूरी अवधि के दौरान उनका लगातार योगदान नहीं था।

14. खाद्यान्न मुद्रास्फीति के कारक तत्वों में हुए परिवर्तन गौरतलब है, जिस पर हाल के प्रसंग में "इस बार यह अलग है" वाली अवधारणा के संदर्भ में स्पष्ट रूप से जोर दिया गया है। पहले लंबे समय तक चले प्रसंगों-सत्तर के दशक के प्रारंभिक वर्षों और अस्सी के दशक के प्रारंभिक वर्षों के प्रसंगों और एकदम हाल में घटित हुए प्रसंग के बीच स्पष्ट समानताएं हैं। इन दोनों में दो प्रमुख खाद्यान्न श्रेणियों के मूल्यों में तीव्र वृद्धि हुई जो कि अनुमानतः निरन्तर बढ़ती मांग और आपूर्ति में आयी तीव्र गिरावट दोनों तत्वों के मेल से हुई थी और ऐसा सामान्यतया अपर्याप्त मानसून के कारण होता है। एक सर्वाधिक हाल के प्रसंग में 2009 एक खराब मानसून वर्ष था और संभवतः इसकी वजह से दालों की कीमतों में तीव्र वृद्धि हुई होगी और इसने मांग पर उनके निरन्तर बने हुए दबाव को और बढ़ा दिया होगा। बाद वाले वर्ष में फल और वनस्पतियों ने इसमें योगदान दिया और मुद्रास्फीति की गति रेखा को और सदृढ़ और प्रदीर्घ बना दिया जबकि 2010 एक अच्छा मानसून वर्ष था। 2011-12 में एक ओर जबकि प्रोटीन का योगदान कुछ कम रहा पर फलों और वनस्पतियों की ओर से दबाव बने रहे हैं।

15. हाल के प्रसंग में खाद्यान्न मुद्रास्फीति में प्रोटीन और फलों तथा वनस्पतियों के महत्व को देखते हुए प्रोटीन श्रेणी में कुछ प्रमुख मदों के योगदान को देखना उचित होगा। चार्ट-7 और 8 में पाँच वर्ष की अवधि के दौरान दाल, दूध और अंडे, मांस और मछली जैसी प्रमुख प्रोटीन मदों का योगदान दर्शाया गया है। चार्ट-7 में हम पहले वर्ष में दालों के मूल्य में तीव्र वृद्धि देखते हैं लेकिन यह बहुत लंबे समय तक जारी नहीं रहती। लेकिन जैसा कि चार्ट-8 में दिखाई देता है इस पूरी अवधि के दौरान दूध का एक महत्वपूर्ण योगदान रहा। इस अवधि के बाद के हिस्से में अंडों, मांस और मछली का योगदान बढ़ गया जो कि कमोवेश रूप से दूध के योगदान के समान हो गया। इन वर्षों के दौरान दालों का योगदान एक प्रकार से समाप्त हो गया। प्रोटीन के अलावा फलों और वनस्पतियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा हालांकि उनमें कुछ घट-बढ़ होती रही।

चार्ट 7: प्रोटीन तथा फल और सब्जियां

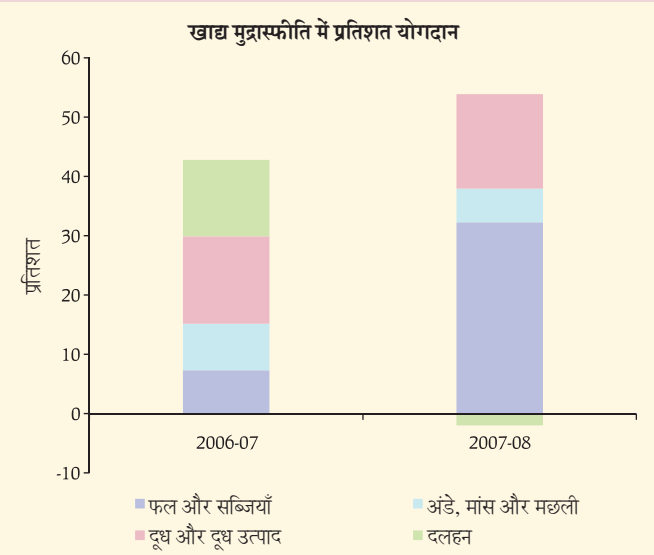

चार्ट 8: प्रोटीन तथा फल और सब्जियां

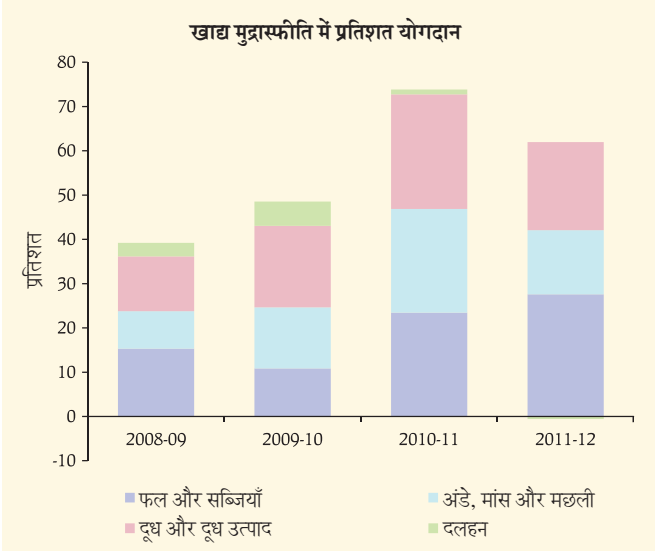

16. इस व्याख्यान के शीर्षक के संदर्भ में उच्च खाद्यान्न मुद्रास्फीति के इस नवीनतम प्रसंग और तुलनात्मक अवधि में पहले के प्रसंगों की मुद्रास्फीति के बीच की समानता स्पष्टतया इस तथ्य से जुड़ी हुई है कि मुद्रास्फीति की ये उच्च दरें खाद्यान्न की दो प्रमुख श्रेणियों के कारण होती हैं। अन्तर इस बात पर निर्भर होता है कि वे दो मदें कौन सी हैं। यह भी महत्वपूर्ण है कि अपेक्षाकृत लंबे प्रसंगों के बीच अपेक्षाकृत छोटे प्रसंगों की एक श्रृंखला रही है जो कि मुद्रास्फीति की निम्न शीर्ष दरों के साथ भी है। इस ढाँचे का नीति की दृष्टि से महत्वपूर्ण आशय है जो कि मैं व्याख्यान के निष्कर्ष के रूप में बताऊंगा।

17. आइये खाद्यान्न मुद्रास्फीति के हाल के ढाँचे के संचालकों पर गौर करें। जब किसी विशेष मद की कीमतें बढ़ती हैं तो वह हमेशा मांग और आपूर्ति के अंतराल के कारण होता है। हाल के परिदृश्य में मैं ऐसा मानता हूँ कि मांग और आपूर्ति दोनों शक्तियाँ इस अंतराल को बनाये रखने में और संभवतः इसे अधिक फैलाने में अपना योगदान दे रही हैं।

18. इस समीकरण के मांग पक्ष को जाँचने के लिए मैं पहले चार्ट 9 में एक पृष्ठभूमि देना चाहता हूँ। सामान्यतया जैसे-जैसे परिवार अधिक सम्पन्न होते जाते है, अपनी आय जो अनुपात वे खाद्य पर खर्च करते थे, वह घटता जाता है। यह एक सार्वभौमिक ढाँचा है और भारत अपवाद नहीं है। स्लाइड में दर्शाये गये डेढ दशक के दौरान शहरी और ग्रामीण दोनों उपभोक्ताओं की खाद्यान्न पर अपने-अपने मासिक प्रति व्यक्ति खर्च (एमपीसीई) में गिरावट आयी है। इस समय मुख्य निष्कर्ष यह है एक ओर जहाँ सापेक्ष रूप से खाद्यान्न व्यय में गिरावट आयी है, मांग के संबंध में महत्वपूर्ण चीज उपभोग के संपूर्ण स्तर हैं।

19. इसे दिखाने का एक तरीका एजेंल घुमाव है जो किसी विशेष पण्य के संबंध में आय और व्यय के संबंध को दर्शाता है। चार्ट-10 और 11 में चार खाद्यान्न श्रेणियों के संबंध में एंजेल घुमाव को दर्शाया गया है। इनमें से तीन उस सेट से हैं जिसके बारे में मैं इस पूरे व्याख्यान में बोलता रहा हूँ और चौथा संसाधित खाद्य और मादक पेय पर हुए खर्च को दर्शाता है। एंजेल वक्रता को व्याख्यायित करने के अनेक तरीके हैं पर सबसे सादा वह है जिसमें मांग में हुए सापेक्ष परिवर्तनों को आय के लचीलेपन के रूप में आंका जाता है। यह बुनियादी रूप से यह मापता है कि आय में प्रति यूनिट वृद्धि से उपभोग कितना बढ़ता है (यहाँ समग्र एमपीसीई के निकट)। यह वक्रता जितनी अधिक होगी उतना ही लचीलापन भी अधिक होगा। मैं इसे एक साधारण तुलना से स्पष्ट करना चाहूंगा।

20. चार्ट 10 में प्रदर्शित ग्राफों में शीर्ष आय दशमक से निम्नतम दशमक के बीच अनाज पर व्यय का अनुपात लगभग 1.8 है। प्रोटीन पर यह 4.5 है। इस साधारण परिकलन से यह पता लगाा है कि जैसे-जैसे परिवार की आय बढ़ती है, प्रोटीन पर व्यय की वृद्धि अनाज के मुकाबले दुगने से अधिक हो जाती है। यही बात फलों और वनस्पति के बारे में लागू होती है और स्पष्टतः संसाधित खाद्य

चार्ट 9: उपभोग का बदलता ढांचा

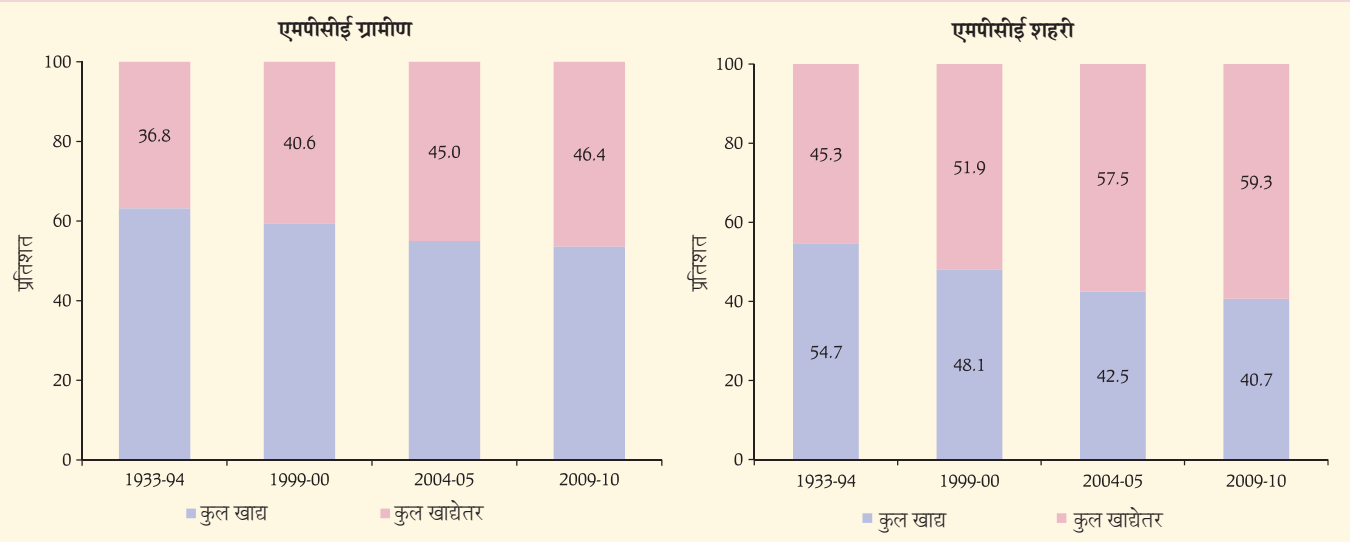

चार्ट 10: शहरी एंजेल वक्र

चुनिंदा खाद्य मदों पर दशमलव-वार मासिक पीसीई: अखिल भारतीय (शहरी)

(रुपये)

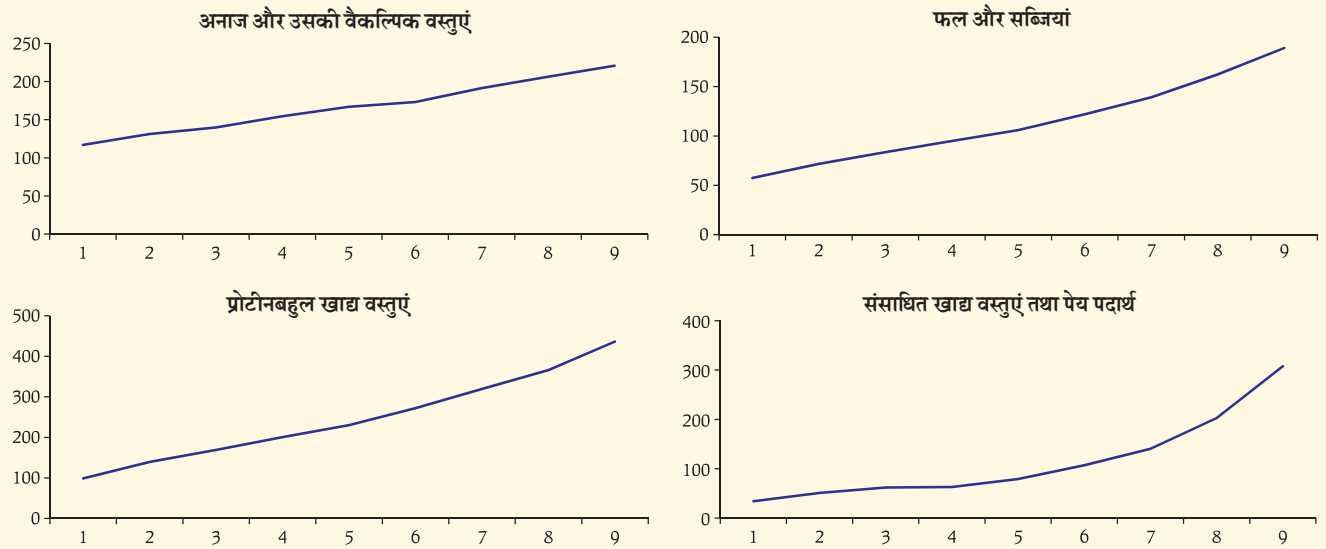

स्रोत: एनएसएसओ के इकाई स्तर के अनुमानित आंकड़े 2009-10

पदार्थों और मादक द्रव्यों के बारे में भी लागू होती है। चार्ट-11 में ग्रामीण परिवारों के बारे में दर्शाये गये एंजेल वक्रताओं में इसी प्रकार अनाज के बारे में ढलान दिखाया गया है और प्रोटीन के बारे में यह ढलान शहरी परिवारों की तुलना में और भी अधिक है।

21. यद्यपि ये घुमाव प्रातिनिधिक समूहों के उपलब्ध आंकड़ों से प्राप्त किये गये हैं जो कि उस समय में एक बिन्दु को दर्शाते हैं, वे समय की अवधि के दौरान ग्राहक व्यवहार के बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए उपयोग में लाये जा सकते हैं। इन ढाँचों से यह मोटा सा

चार्ट 11: शहरी एंजेल वक्र

चुनिंदा खाद्य मदों पर दशमलव-वार मासिक पीसीई: अखिल भारतीय (ग्रामीण)

(रुपये)

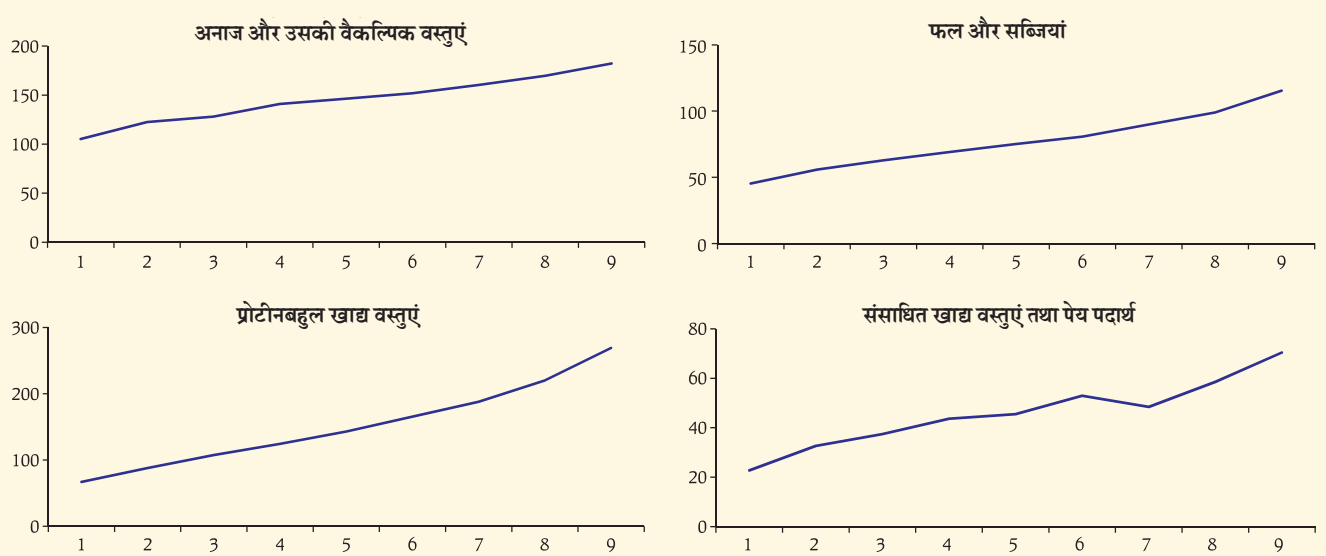

स्रोत: एनएसएसओ के इकाई स्तर के अनुमानित आंकड़े 2009-10

निष्कर्ष निकलता है कि जैसे-जैसे परिवारों की आय में वृद्धि होती जाती है, खाद्यान्न पर उनका व्यय प्रोटीन,फलों और वनस्पतियों पर अपेक्षाकृत अधिक होने लगता है जो कि मांग संबंधी दबावों में वृद्धि करता है।[2]

22. कोई भी इस सामान्य बात से इन्कार नहीं करेगा कि जैसे-जैसे लोगों के पास धन बढ़ता है, लोग बेहतर खाने लगते हैं (जो कि उनकी अधिक विविधतापूर्ण और संतुलित खुराक में दिखाई पड़ता है)। लेकिन इस समीकरण से मांग संबंधी दबाव का बढ़ना अवश्यसंभावी हो पर आवश्यक नहीं कि इससे मूल्यों पर एक लगातार दबाव बनता है। आर्थिक विकास की एक सामान्य और सुसंगत विशेषता यह है कि वह संबंधित खाद्य पदार्थों की आपूर्ति को बढ़ाते हुए इन परिवर्तनों को अपने भीतर खपा लेता है। यहीं पर हमारे सामने समस्या आती है।

23. आइये इस तस्वीर के आपूर्ति संबंधी पहलू को देखें जिसमें दालों और दूध को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है हालांकि मैं मानता हूँ कि वे एक व्यापक मुद्दे को दर्शाते हैं। चार्ट-12 भारत में एक लंबी अवधि के दौरान दालों की उत्पादकता को दर्शाता है। 90 के दशक के मध्य तक इनकी उत्पादकता में निरन्तर वृद्धि होती रही और इसने 600 किलो/हेक्टर की सीमा को पार कर लिया। उसके बाद पिछले डेढ दशक में इसमें घट-बढ़ होती रही है परन्तु इसने निरन्तर बढ़ने की प्रवृति नहीं दर्शायी है। समग्र आपूर्ति के परिप्रेक्ष्य

चार्ट 12: दालों की उत्पादकता में स्थिरता

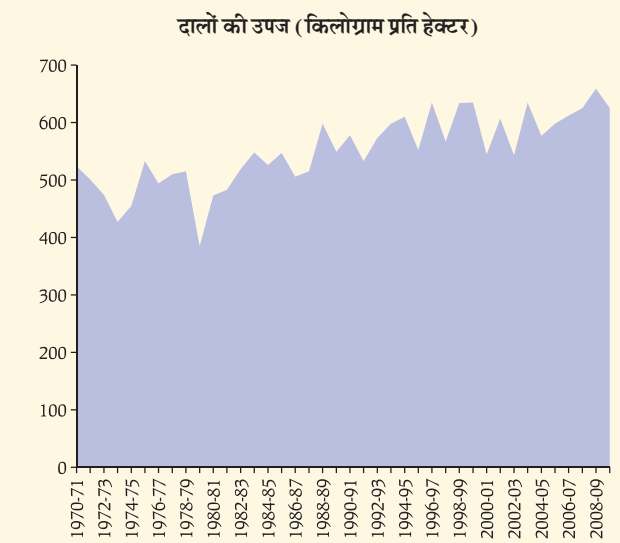

में इसका अर्थ यह है कि उत्पादन को बढ़ाने का एक मात्र तरीका यह है कि उत्पादकता के क्षेत्र को बढाया जाये, परिणामतः अन्य फसलों के लिए उपलब्ध जमीन को घटाया जाये।

24. क्या उच्चतर उत्पादकता के द्वारा उत्पादन को बढ़ाने के कुछ और अवसर हो सकते हैं जो कि उत्पादकता को बढ़ाने का सर्वोत्तम तरीका है? चार्ट 13 में राज्यों में दालों की उत्पादकता में आये परिवर्तन को दर्शाया गया है। निस्संदेह इससे विभिन्न प्रकार की

चार्ट 13: उत्पादकता में भिन्नता

2009-10 में कुल दालों की राज्यवार उपज

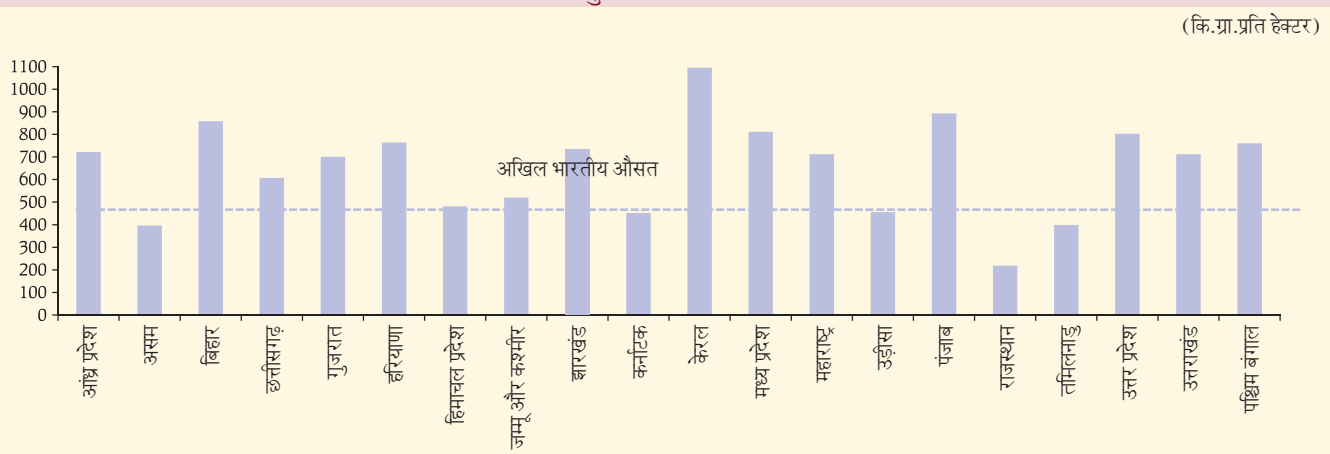

स्रोत: कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

[2] मांग आपूर्ति के मूलभूत तत्वों के आधार पर भारत में प्रोटीन के प्रमुख खाद्य स्रोतों के मूल्यों में माइक्रो स्तर की गतिशीलता की चर्चा 'मैक्रोइकोनॉमिक्स ऐंड फाइनैंस इन इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमिज' के खंड 2 अंक 4 के 'दि प्राइस ऑफ प्रोटिन' में की गई है।

दालों के बीच के फर्क का पता नहीं चलता जो कि एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। परन्तु सकल स्तर पर यह ढाँचा दर्शाता है कि अनेक बड़े राज्य हैं जिनमें दालें प्रातिनिधिक खुराक का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं लेकिन उनकी उत्पादकता राष्ट्रीय औसत से बहुत कम है। यदि समग्र रूप से उत्पादकता को सुधारना है तो एक ऐसी रणनीति संभवतः इसका सर्वोत्तम उपाय है जिसमें इन राज्यों में विशिष्ट गतिरोधों पर ध्यान केन्द्रित किया जाये।

25. विभिन्न प्रकार की दालों के उत्पादकता ढाँचों को देखते हुए मैं अभी विकेन्द्रीकरण के अगले स्तर तक नहीं गया हूँ। कुछ अन्तर राज्यीय विभिन्नताएं इसलिए हैं कि अलग-अलग राज्यों में फसल समूहन अलग-अलग है। प्राथमिकताओं में सुदृढ़ अन्तः क्षेत्रीय विभिन्नताओं के कारण यह विभेद महत्वपूर्ण है। विशेषकर पश्चिमी और दक्षिणी क्षेत्रों में उपभोक्ता की पसंद तुअर (या अरहर) दाल है, जबकि उत्तर में चना और उड़द अधिक लोकप्रिय है। मसूर पूर्व में मिली जुली पसंद के अन्तर्गत है। इन विभिन्नताओं के बीच स्थानापन्नता की अपेक्षाकृत कमी के कारण, उत्पादकता बढ़ाने की रणनीतियाँ बनाते समय इनमें से प्रत्येक मद में आपूर्ति-मांग असंतुलन को ध्यान में रखना होगा। दाल की किसी ऐसी किस्म में, जिसकी सभी जगहों पर एक समान खपत नहीं है, महत्वपूर्ण वृद्धि से मांग-पूर्ति असंतुलन को दूर करने में विशेष सहायता नहीं मिलेगी।

26. चार्ट-7 और 8 की ओर कुछ देर के लिए फिर से लौटें जिनमें कि मुद्रास्फीति में दालों के सापेक्ष योगदान को दर्शाया गया है। हम देखेंगे कि सकल स्तर पर इसके मंद हो जाने का एक कारण यह है कि सभी दालों के मामले में मांग और आपूर्ति का वही असंतुलन

चार्ट 14: दूध उत्पादन में धीमी वृद्धि

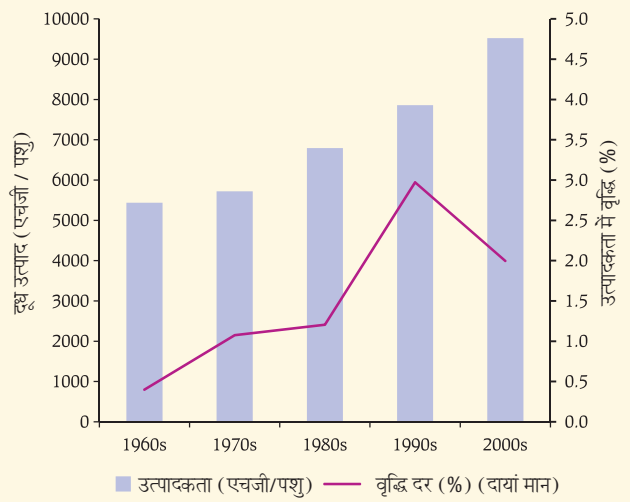

स्रोत: एफएओ

नहीं है। उदाहरण के लिए चना की, जो कि उत्तरी क्षेत्र में एक-एक महत्वपूर्ण रबी की फसल है, अपेक्षाकृत एक स्थिर उपज है और परिणामस्वरूप उसकी अपेक्षाकृत स्थिर कीमतें हैं। दूसरी ओर, तूर की उपज में, जो मुख्यतया देश के दक्षिणी हिस्से में होती है, अधिक अस्थिरता है और इसके परिणामस्वरूप पिछले कुछ वर्षों में इसकी कीमतों में अधिक तेजी से वृद्धि हुई है।

27. जहाँ तक दूध का प्रश्न है, चार्ट-7 और 8 में हमने देखा कि इस समूची विवेचनाधीन अवधि के दौरान दालों के मुकाबले दूध का खाद्यान्न मुद्रास्फीति में बहुत अधिक योगदान रहा है। और दालों के विपरीत दूध एकरूप उत्पाद है। देश की आबादी का जैसा ढाँचा है और संसाधित खाद्य उत्पादों की जिस तरह से मांग बढ़ रही है, जिसमें कि दूध की एक अहम् भूमिका है। दूध की मांग बढ़ रही है और वह निरन्तर बहुत तीव्रता से बढ़ती रहेगी। तथापि, चार्ट-14 यह दर्शाता है कि पिछले दशक के दौरान दूध की पैदावर की वृद्धि दर में महत्वपूर्ण गिरावट आयी है। इसका अर्थ यह है कि एक ही तरीका है जिससे दूध का उत्पादन बढ़ सकता है वह यह कि मवेशियों की संख्या को बढ़ाया जाये। इसमें निहित निवेश और रखरखाव का खर्च अन्य क्षेत्रों की कीमत पर होगा। पिछले दशकों के अनुभव से सबक सीखा जा सकता है जहाँ कि उत्पादकता में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई थी।

28. खाद्यान्न मुद्रास्फीति को संयत रखने में उत्पादकता संबंधी लाभ का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। तथापि, उत्पादक के प्राप्त स्तरों को देखते हुए, प्रमुख निविष्टियों की लागत से ही उत्पादों की कीमतें निर्धारित होती है। उत्पादन की लागत कैसे निर्धारित होती है - इस पर चर्चा करते हुए यद्यपि मैं प्रोटीन, फलों और वनस्पतियों के बारे में बात करता रहा हूँ, मैं दो कारणों से धान का उदाहरण देना चाहूंगा।

29. पहला कारण तो यह है कि धान बहुत सारे राज्यों में उपजाया जाता है और इसलिए इसकी लागत का स्वरूप राष्ट्रीय प्रवृतियों में प्रतिलक्षित होता है। धान की पैदावार की लागत में विभिन्न निविष्टियों का अपेक्षाकृत अंश चार्ट-15 में दर्शाया गया है। लागत हिस्से के अनुसार सर्वाधिक महत्वपूर्ण निविष्टि निःसंदेह श्रमिक हैं। इनका योगदान अलग-अलग राज्यों में कम ज्यादा है लेकिन दर्शाये गये सभी राज्यों में लागतों में अब तक यह सबसे बड़ा घटक रहा है। परिणामस्वरूप, देश भर में उत्पादन की लागत इस बात पर निर्भर करेगी कृषि मजदूरों के वेतन में गतिशीलता कैसी है?

30. इस महत्वपूर्ण घटक की गतिशीलता को चार्ट 16 में दर्शाया गया है। अपेक्षाकृत लंबी रेखा पिछले वर्ष के दौरान ग्रामीण अकुशल श्रमिकों के सांकेतिक वेतनों में वृद्धि को दर्शाती है। छोटी पंक्तियाँ इस श्रेणी के श्रमिकों के लिए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में आये

चार्ट 15: धान की खेती की लागत संरचना

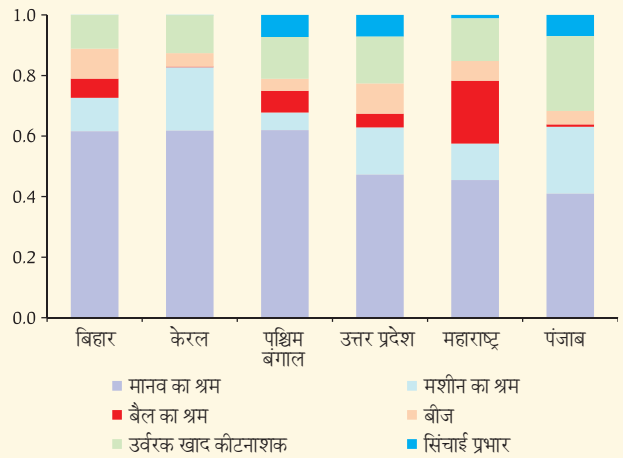

स्रोत: सीएसीपी रिपोर्ट, भारत सरकार, 2011-12 खरीफ

परिवर्तन को दर्शाती हैं। लगभग सभी राज्यों में सांकेतिक वेतन उपभोक्ता कीमतों में हुई वृद्धि के मुकाबले बहुत अधिक है। स्पष्ट है कि श्रम-लागत में तेजी से वृद्धि हो रही है, जिसका खाद्यान्न जैसे पण्यों के मामले में अर्थ यह है कि बिक्री मूल्य बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। यहाँ मुख्य बात यह है कि यदि वेतनों में वर्तमान दर से वृद्धि होती रही तो चाहे जो भी कारण हों, उसका सभी कृषि पण्यों की कीमतों पर बड़ा दबाव पड़ेगा। कृषि पण्यों के लागत स्वरूप में वेतन की लागतों का बड़ा योगदान होता है।

31. मुझे इस बात को रेखांकित करना है कि विकास के एक बृहद परिप्रेक्ष्य में वेतन लागतों में वृद्धि वास्तव में एक अच्छी चीज है। विकास का प्राथमिक उद्देश्य उच्चतर आय से जीवन स्तरों को उठाना है। तथापि, इस प्रक्रिया का बने रहना पूरी तरह इस पर निर्भर करता है कि क्या वेतन में वृद्धि उत्पादकता में वृद्धि का परिणाम है। यदि उत्पादक अन्य निविष्टियों को श्रम का स्थानापन्न नहीं बनाता तो उत्पादकता की तुलना में वेतन में वृद्धि का परिणाम केवल कीमतों में वृद्धि में होता है। धान का लागत स्वरूप श्रमिक के महत्व को दर्शाता है। अन्य फसलों के लिए स्थनापन्नता की संभावनाएं हो सकती है, पर यह अनेक कारणों पर निर्भर करता है, जैसे उपज की मात्रा, बुनियादी संरचनागत सेवाओं की गुणवत्ता और इसी तरह की अन्य बातें। अनेक पण्यों में बढ़ती हुई मजदूरी के साथ-साथ उत्पादकता में गतिरोध कीमतों में निरन्तर होती वृद्धि की मुख्य वजह है।

32. एक दूसरा कारण कि मैंने यहाँ उदाहरण के रूप में धान का चयन क्यों किया है, कीमतों की गतिशीलता और अनाज भंडार के बीच महत्वपूर्ण संबंध को रेखांकित करना है। जैसा कि सभी जानते हैं, सरकार चावल और गेहूँ का महत्वपूर्ण भंडार अपने पास रखती है क्योंकि अभाव की स्थितियों में उन्हें बाजार में लाने की आवश्यकता होती है और इस तरह उनकी उपलब्धता को उचित कीमतों पर सुनिश्चित किया जाता है और इस बात के प्रमाण हैं जो यह संकेत देते हैं कि उनकी मात्र उपस्थिति ही कीमतों में अस्थिरता को कम करने का कार्य करती है। चार्ट-17 में पिछले डेढ दशकों के दौरान अनाज की कीमतों की गतिशीलता और उनके स्टॉक के स्तर के बीच के संबंध को दर्शाया गया है। यह संबंध बहुत स्पष्ट है और उसकी एक समसामयिकता है। जैसे स्टॉक कम होता है और अनाज की कीमतों में वृद्धि की दर बढ़ती है। और इसके विपरीत जिन अवधियों में स्टॉक अधिक था उनमें मूल्य वृद्धि की दर अपेक्षाकृत कम रही है।

चार्ट 16: बढ़ते वेतन

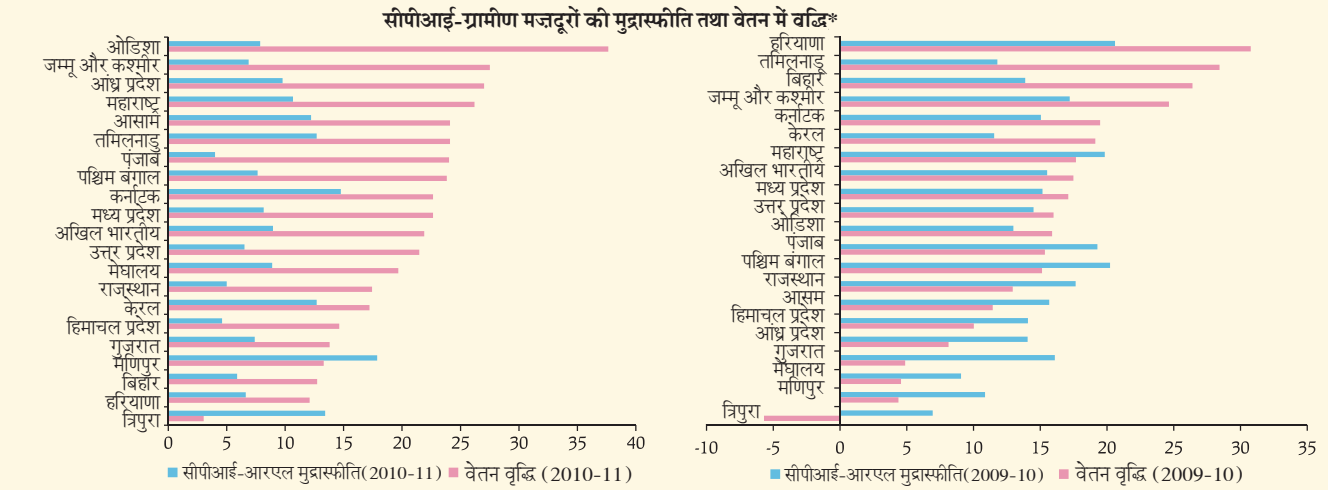

* मार्च में वर्ष-दर-वर्ष वृद्धि: ग्रामीण अकुशल मजदूर (पुरुष) वेतन
स्रोत : इंडियन लेबर जर्नल, श्रम ब्यूरो, श्रमिक मंत्रालय

चार्ट 17: अनाज का स्टाक तथा कीमतें

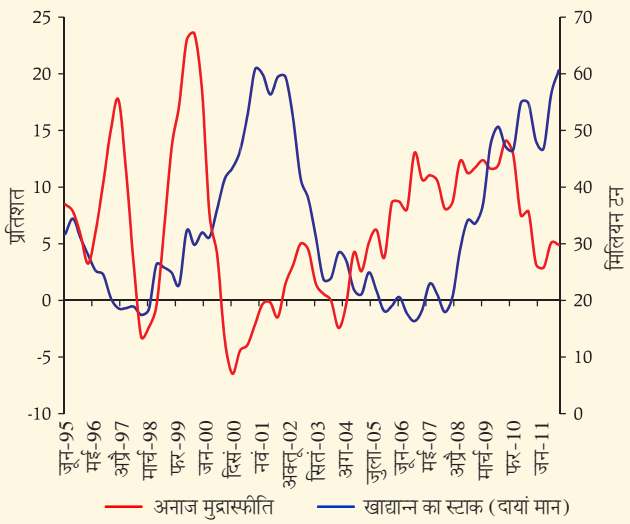

33. स्टॉक के रखरखाव के तरीकों पर सार्वजनिक रूप से काफी चर्चा होती रही है और इस बारे में कुछ चिंता भी प्रकट की गयी है कि यदि आवश्यकता पड़े तो उनकी क्षमता खाद्यान्न सुरक्षा की जरूरतों को करने की नहीं है। इस बारे में महत्वपूर्ण बहस हुई है पर यहाँ मैं उसमें नहीं जाना चाहता। मूल्य स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में अनाज का प्रमाण इस कथन की पुष्टि करता है कि स्टॉक का एक विश्वसनीय स्तर वास्तव में मूल्य स्थिरता को नियंत्रण में रखता है। निःसंदेह हर पण्य को स्टॉक करना, खास कर लंबी अवधियों तक स्टॉक करना आसान नहीं है। इसलिए यह विशेष रणनीति उन सारी पण्यों के लिए लागू नहीं होती जिन पर हमारा इस चर्चा में ध्यान केन्द्रित है। लेकिन अनाज के मामले से मिला सबक यह है कि जहाँ कहीं भी और जितना भी संभव हो, आपूर्ति में आये गतिरोधों को दूर करने के लिए अल्प सूचना पर बाजार में अतिरिक्त आपूर्ति की क्षमता एक कारगर उपाय हो सकता है।

34. समाप्त करने से पहले मैं आपूर्ति से संबंधित एक अंतिम बात को रेखांकित करना चाहता हूँ। इसका संबंध एक लंबी समयावधि में मानसून के स्थिति से जुड़ा है। हम लोग दीर्घकालीन लाभ (एलपीए) के रूप में जाने गये 'आधार' से कम या अधिक मानसून को 'सामान्य' या कमी वाले मानसून के रूप में जानते रहे हैं। किसी एक विशेष दशक के लिए 'एलपीए' उस दशक से पहले के 50 वर्षों की वर्षा के औसत के रूप में जाना जाता है। इसलिए दशक समाप्त होने के बाद प्रत्येक 10 वर्ष के लिए इसे अद्यतन किया जाता है, जिसे औसत में जोड़ दिया जाता है। तथापि, यदि 'आधार' स्वयं ही बदल रहा हो, तो 'सामान्यता' या 'कमी' अवधारणाएं किसी दिये गये वर्ष के लिए वर्षा की सकल मात्रा को पूरी तरह नहीं समझा सकतीं। किसी एक वर्ष का सामान्य मानसून वास्तव में किसी दूसरे वर्ष के सामान्य मानसून से कम भी हो सकता है।

35. चार्ट-18 में देश भर में दक्षिण-पश्चिमी मानसून के लिए 'आधार' को दर्शाया गया है। यह स्पष्ट रूप से गिरावट की प्रवृति को दर्शाता है। इसका अर्थ यह है कि सामान्य मानसून वास्तव में अतीत के मुकाबले कम जल प्रदान कर रहे हैं। यह उन क्षेत्रों के लिए बहुत महत्वपूर्ण न हो जहाँ भारी वर्षा होती है, लेकिन देश के कुछ हिस्सों में, विशेषकर मध्य क्षेत्रों में इस प्रकार की गिरावट से जल का अभाव हो सकता है और उसके परिणामस्वरूप उत्पादकता में निष्क्रियता आ सकती है। उल्लेखनीय है कि इन क्षेत्रों में दालें पैदावार का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। संक्षेप में कहा जाये तो उत्पादकता वृद्धि में अन्य सभी बाधाओं के साथ-साथ दीर्घावधि के आधार पर जल की उपलब्धता भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी।

36. मैं इस व्याख्यान के दो प्रमुख बिंदुओं को रेखांकित करते हुए और कुछ नीतिगत आशयों को स्पष्ट करते हुए समाप्त करना चाहता हूँ। पहला तो यह कि हम वर्तमान में एक ऐसी स्थिति के मध्य में दिखाई पड़ रहे हैं जो कि अपनी मात्रा और कालावधि के आधार पर 1970 के दशक के प्रारंभिक और परवर्ती वर्षों के खाद्यान्न मुद्रास्फीति की घटनाओं के समान है। इन तीनों तुलनीय घटनाओं में, जिनमें एकदम ताजी घटना भी शामिल है, खाद्यान्न की दो महत्वपूर्ण श्रेणियों का मुद्रास्फीतिगत दबावों को बनाने और उन्हें जारी रखने में

चार्ट 18: दक्षिण-पश्चिम मान्सून वर्षा
50 वर्ष का चल औसत

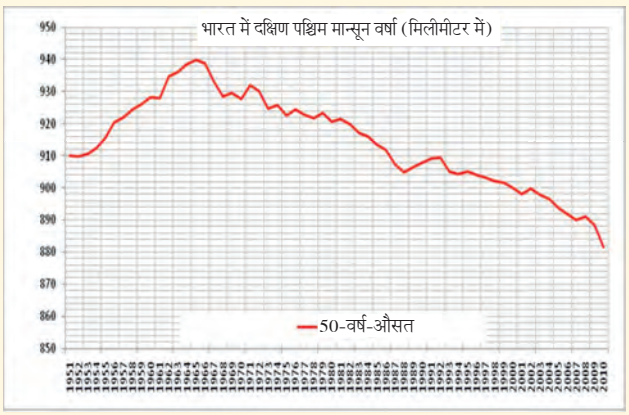

50 वर्षों को औसत के रुप में लेकर प्रत्येक 10 वर्ष में लेकर आईएमडी-एलपीए की गणना की जाती है अर्थात 2011-2019 का आईएमडी एलपीए 89 सेंमी है जो 1951-2000 तक की अवधि की पूरे देश की औसतन वर्षा दर्शाता है।

महत्वपूर्ण योगदान रहा है। तथापि, पहले की घटनाओं और हाल की घटना के बीच का मुख्य अन्तर वे पण्य मदों की जोड़ियाँ हैं, जो इनमें शामिल हैं। पहले ये अनाज और चीनी थी और अब प्रोटीन और फल तथा वनस्पतियाँ हैं।

37. दूसरे, जब कीमतें इसलिए बढ़ रही हो, कि मांग तेजी से बढ़ रही हो और आपूर्ति में गतिरोध हो या वह घट रही हो तब खाद्यान्न मुद्रास्फीति को रोकने का इसके सिवाय कोई उपाय नहीं है कि आपूर्ति को तेजी से बढ़ाया जाये। प्रोटीनों और फलों तथा वनस्पतियों की कीमतों पर वर्तमान में दबाव इन विभिन्न परिस्थितियों के आपस में मिल जाने से है। तथापि, श्रम की लागतों और एक लंबे फलक पर वर्षा की सकल मात्रा में दिखाई पड़ते स्वरूपगत गिरावट के कारण पैदा हो रहे दबावों की वजह से उत्पादनशीलता को शीघ्रता से बढ़ाना अपने आप में एक गंभीर चुनौती है।

38. इस विश्लेषण से मैं तीन नीतिगत आशयों को रख रहा हूँ। पहला तो यह कि 1970 के दशक तक निरन्तर बनी रहने वाली खाद्यान्न मुद्रास्फीति के वातावरण से 80 और 90 के दशकों में अल्पजीवी और कम सघनता वाली घटनाओं की ओर संक्रमण नीतिगत हस्तक्षेपों की एक समूची श्रृंखला का प्रत्यक्ष परिणाम था, जिन्हें हम सामूहिक तौर पर 'हरित क्रांति' कहते हैं। ये हस्तक्षेप कीमत संबंधी प्रोत्साहनों, निविष्टि संबंधी इमदादों, प्रौद्यागिकी निविष्टि और बुनियादी संरचनागत सुविधा के लिए किये निवेशों - विशेषकर सिंचाई और अत्यंत महत्वपूर्ण क्षेत्र अर्थात सुरक्षित भंडारों के लिए किये गये निवेशों के मेल से बने थे और इनसे अनाज और साथ ही अन्य फसलों की उत्पादनशीलता बढ़ी और उसमें स्थिरता आयी। इन वर्षों में खाद्यान्न मुद्रास्फीति में अनाजों का योगदान नहीं है और इससे संभवतः यह धारणा बनी कि खाद्यान्न मुद्रास्फीति समस्या को हल कर लिया गया है।

39. तथापि, हम सभी यह जानते हैं और सभी को यह जानना चाहिए कि विकास की कथा एक निरन्तर विकसित होती कथा है। खाद्यान्न और अन्य उत्पादों और सेवाओं की मांग उपभोक्ताओं में समृद्धि के बढ़ने से बदलती है। विकास की गति को बनाये रखने के लिए इन बदलती हुई मांगों को पूरा करने के लिए अर्थव्यवस्था में क्षमता का निर्माण करना आवश्यक है। समूचे इतिहास में बढ़ती हुई समृद्धि के साथ आहार संबंधी आदतें भी बदलती रही हैं। अनाज प्रमुखता वाली खुराक से अधिक संतुलित खुराक की ओर संक्रमण जिसमें प्रोटीनों और फलों तथा वनस्पतियों के लिए अधिक मांग हो, एक ऐसी स्थिति है जिसका सभी देशों ने सामना किया है और हम अपवाद नहीं हैं। आज यह स्थिति चरम पर है और एक सुदृढ़ आपूर्ति के न होने का अर्थ यह होगा कि अपना स्तर उठाने के इच्छुक बहुत सारे उपभोक्ताओं को इस संक्रमण के अवसर से वंचित किया जा रहा है।

40. दूसरे, आपूर्ति बढ़ाने वाली नीति के मोटे उद्देश्य हालांकि वही रहते हैं, जैसे कि मुख्यतया उत्पादनशीलता में वृद्धि के मार्फत उत्पादन को बढ़ाना और उसमें स्थिरता लाना फिर भी इस रणनीति के तत्वों को दोनों जरुरतें पूरी करनी है - पहला तो पण्यों की आवश्यकताओं को पूरा करना और दूसरा, एक समग्र आर्थिक और संस्थागत वातावरण के साथ सुसंगत बने रहना। 1960 और 1970 के दशकों में जिस तरह के हस्तक्षेप किये गये थे उन्हें महज दोहराना अब प्रभावकारी नहीं होगा क्योंकि पण्यों की प्रकृति इतनी अलग है। साथ ही, इन हस्तक्षेपों की एक महत्वपूर्ण राजकोषीय लागत होगी, जिसे आज की परिस्थितियों में उठाना एक हद तक कठिन है। संक्षेप में यह कि प्रभावी रणनीति पण्यों की प्रकृति और अर्थव्यवस्था की स्थिति के अनुकूल होनी चाहिए। मुझे संदेह नहीं है कि उपलब्ध ज्ञान से ऐसी रणनीति विकसित की जा सकती है और सही प्रकार के संसाधनों से उसे जोड़ा जा सकता है। समन्वय मूल मंत्र है।

41. तीसरे, मौद्रिक नीति के संदर्भ में यह बात उल्लेखनीय है कि अर्थव्यवस्था पर आपूर्ति संबंधी दबावों के निरन्तर बने रहने के आशय - वे खाद्यान्न, ऊर्जा, श्रम या अन्य किसी महत्वपूर्ण घटक में जिससे भी संबंधित हों, स्पष्ट तौर पर तीव्र वृद्धि और निम्न मुद्रास्फीति के बीच संतुलन बनाये रखने के लिए अच्छे नहीं हैं। एक स्थायी किस्म के आपूर्ति आघात से निम्न वृद्धि और उच्च मुद्रास्फीति पैदा होती है, जो कि अपेक्षाओं के माध्यम से मुद्रास्फीतिगत दबावों को और भी अधिक बढ़ा सकते हैं। ऐसी स्थिति में, केन्द्रीय बैंकों को अपेक्षाओं के माध्यम से पैदा होने वाले मुद्रास्फीति के जोखिम और धीमी वृद्धि में, जो कि मुद्रास्फीति-विरोधी नीतिगत उपायों के कारण और भी मंद हो जाती है, किसी एक को चुनना होता है। दूसरे शब्दों में खाद्यान मुद्रास्फीति के अस्थायी प्रसंगों में यद्यपि मौद्रिक नीतिगत प्रत्युत्तर की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन यदि उद्देश्य एक समग्र मुद्रास्फीति को काबू में रखना है तो लगातार बने रहने वाले ऐसे प्रसंगों को देखते हुए कार्रवाई करने की आवश्यकता बहुत तर्कसंगत है।

42. संक्षेप में, विकास और जीवन स्तर तथा मौद्रिक नीति दोनों ही परिप्रेक्ष्य में प्रोटीन और फलों व वनस्पतियों की उत्पादकता को तेजी से बढ़ाने की आवश्यकता है।

43. अंतः में वर्ष 2011 का काले स्मृति व्याख्यान देने हेतु मुझे आमंत्रित करने के लिए मैं गोखले इंस्टीट्यूट तथा प्रो. परचुरे को पुनः एक बार धन्यवाद देता हूँ। आज स्नातक हो रहे छात्रों के भविष्य के लिए मैं अपनी शुभकामनाएं ज्ञापित करता हूँ।